INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 5.71 (SJIF 2021)

आधुनिक भारत के निर्माता के रूप में अम्बेडकर की पथ–प्रदर्शक की भूमिकाः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

राज मलवाण

सहायक आचार्य
राजनीति विज्ञान विभाग
श्री कल्याण राजकीय कन्या महाविद्यालय, सीकर (राजस्थान)

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/08.2021-72843815/IRJHIS2108022

शोध सारांश :

डॉ. अम्बेडकर एक महान् बुद्धिजीवी, राजनीतिज्ञ, ज्ञानी विद्वान, सबसे ऊपर वह भारत के अछूतों और पिछड़ें वर्गों के तारक तथा उद्धारक थे। उन्होंने सामाजिक क्रान्ति की शुरूआत की तथा उन लोगों के लिए सामाजिक न्याय हासिल किया, जिन्हें हजारों वर्षों तक मानव के मूल अधिकारों से वंचित रखा गया था। उन्हें 'बाबा साहेब' के नाम से भी जाना जाता है। वे एक ऐसे देशभक्त थे, जिन्होंने हमेशा देश को सर्वोपरि रखा। बौद्धिक हथियार और सीने में धधकती भावना से लैस बाबा साहेब अंबेडकर ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था के सम्पूर्ण सामाजिक–सांस्कृतिक जीर्णोद्धार का अथक प्रयास किया तथा समाज द्वारा पीड़ित इस वर्ग को सामाजिक कुरीतियों तथा भेदभावों के खिलाफ लड़ने के लिए संगठित किया। एक दीन पृष्ठभूमि से उभरते हुए, वह आजाद भारत के पहले कानून मंत्री तथा भारत के संविधान के पिता बने। उन्होंने धार्मिक कट्टरता की अभेद दीवार को तोड़ा तथा एक ऐसे देश की स्थापना का प्रयास किया, जहां कानून, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा स्थापित हो सके। उन्होंने समाज की सामाजिक व्यवस्था की मूल संरचना पर सवाल उठाया और एक ऐसे राजनीतिक तंत्र की हिमायत की, जिसमें लोगों की स्वतंत्रता, उनकी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक महत्वकांक्षाओं, मानवाधिकारों और मानव गरिमा का सम्मान किया जा सके। आज डॉ. अंबेडकर हमारे बीच नहीं है लेकिन उनकी महानता, उन्हें हमारे बीच सदैव जीवित रखेगी। इस शोध पत्र में हम डॉ. अंबेडकर के आधुनिक भारत के निर्माण दिए गए योगदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन करेंगे।

मुख्य शब्दः *सामाजिक–आर्थिक विचारक, सामाजिक क्रान्ति, सामाजिक न्याय, मानव अधिकार, मानव गरिमा, समाज सुधारक, उद्धारक आदि।*

संक्षिप्त परिचयः

आधुनिक भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना व दलित वर्गों के उत्थान के प्रति प्रतिबद्धता के प्रतीक के रूप में डॉ. भीमराव अम्बेडकर का नाम हमेशा याद रखा जाएगा।

डॉ. अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महू छावनी में हुआ था। इनके पिता का नाम रामजी सकपाल एवं माँ का नाम भीमा बाई था। इनका परिवार महाराष्ट्र के रत्नगिरी जिले के खेता तालुके के एक छोटे से गाँव अम्बवड़े से जुड़ा हुआ था। अम्बेडकर के पिता ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेना से सेवा–निवृत्त होने के पश्चात् महू से, महाराष्ट्र के कोकण जिले के गाँव दापोली में आकर बस गये। दापोली में

ही अम्बेडकर ने अपने बड़े भाई के साथ प्राईमरी स्कूल में प्रवेश ले लिया। 1907 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। पिछड़ी हुई महार जाति में किसी बालक के लिए मैट्रिक तक शिक्षित हो जाने को महत्वपूर्ण उपलब्धि माना गया और भीमराव अम्बेडकर की सर्वत्र प्रशंसा हुई।

एलिफिंस्टन कॉलेज बम्बई से 1912 में उन्होंने स्नातक की उपाधि प्राप्त की। जून, 1913 में वे उच्चतर अध्ययन के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका चले गये। वहां उन्होंने विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। 1915 में उन्होंने कोलम्बिया विश्वविद्यालय से मास्टर ऑफ आर्ट्स की उपाधि प्राप्त की। 1917 में उन्होंने कोलम्बिया विश्विद्यालय से ही 'नेशनल डिविडेण्ड ऑफ इण्डिया–इन हिस्टोरिकल एण्ड एनेलिटिक स्टेडी' शीर्षक शोध प्रबन्ध पर पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् डॉ. अंबेडकर लन्दन आ गए और वहॉ उन्होंने विधि के अध्ययन के लिए 'दी ग्रेज इन' में तथा अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए 'लन्दन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड पॉलिटिकल साइन्स' में प्रवेश लिया। अगस्त, 1917 में डॉ. अम्बेडकर बम्बई वापस आ गये। वापस आकर उन्होंने बड़ौदा राज्य में मिलिट्री सचिव के रूप में अपनी सेवा देना प्रारम्भ कर दी। बड़ौदा राज्य में उच्च पद पर नियुक्त होने के पश्चात् भी, एक अछूत समझी जाने वाली महार जाति का सदस्य होने के कारण अम्बेडकर को बड़ौदा में निरन्तर कठिनाइयाँ और अपमान सहन करने पड़े थे। जिसके फलस्वरूप वह बड़ौदा छोड़कर बम्बई आ गए। बम्बई में नवम्बर, 1918 में उन्हें एक कॉलेज में राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के पद पर नियुक्ति प्राप्त हो गई। अपनी उत्कृष्ट प्रतिभा और श्रेष्ठ वक्ता होने के कारण उन्होंने विद्यार्थियों के मध्य एक अच्छे शिक्षक की ख्याति प्राप्त कर ली थी, किन्तु अस्पृश्यता की वेदना उन्हें यहां भी झेलनी पड़ी।

अप्रैल, 1923 में अम्बेडकर बैरिस्टर के रूप में वकालत प्रारम्भ कर दी। वकालत में अपना व्यवसाय जमा लेने के पश्चात् उन्होंने अस्पृश्यों की समस्या पर ध्यान केन्द्रित करना प्रारम्भ कर दिया। और सार्वजनिक जीवन में रूचि लेने लगे।

अम्बेडकर ने दलित वर्गों को संगठित करने की आवश्यकता अनुभव की ताकि वे सवर्णों द्वारा किये जा रहे सामाजिक अन्याय के प्रतिकार के लिए प्रभावशाली संघर्ष कर सके। इस उद्देश्य से उन्होंने 20 जुलाई, 1924 को 'बष्कृित हितकारिणी सभा' की स्थापना की। दलित वर्गों में नव–जागरण का सन्देश प्रसारित करके व उनके प्रति हो रहे अन्याय की प्रतिकार करने के लिए अनेक शांतिपूर्ण आन्दोलनों का नेतृत्व करके अम्बेडकर भारत में दलित वर्गो के शीर्षस्थ नेता के रूप में उभर चुके थे। 8 अगस्त, 1930 को नागपुर में आयोजित 'अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन' की अध्यक्षता डॉ. अम्बेडकर ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में अम्बेडकर ने भारत के लिए स्वशासन की जोरदार वकालत की, किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट किया कि भारत में स्वराज्य की कोई योजना तभी सार्थक और सफल हो सकती है, जबकि उसके अन्तर्गत दलित वर्गों के समान अधिकारों को मान्यता दी जाये और उनके प्रति शताब्दियों से होते आ रहे सामाजिक अन्याय की प्रतिकार किया जाए।

अगस्त, 1932 में ब्रिटिश सरकार ने 'साम्प्रदायिक पंचाट' की घोषणा की, जिसमें अस्पृश्यों के लिए पृथक् निर्वाचक–मंडल को स्वीकार कर लिया गया। महात्मा गांधी जी ने 'साम्प्रदायिक पंचाट' के विरूद्ध आमरण–अनशन प्रारम्भ कर दिया। अन्ततः अम्बेडकर को गांधी जी के आग्रह के आगे झुकना पड़ा और सितम्बर, 1932 में यरवदा जेल में प्रसिद्ध 'पूना पैक्ट' पर हस्ताक्षर किये गये।

डॉ. अम्बेडकर के मन में यह विश्वास शनैः–शनैः दृढ़ होने लगा कि जब तक अस्पृश्य और दलित वर्ग

हिन्दू समूदाय का अंग रहेंगे, उन्हें समाज में न्याय सम्मत और सम्मानजनक स्थान प्राप्त नहीं होगा। 1955 में उन्होंने भारतीय बुद्ध महासभा की स्थापना की तथा भारत में बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार का बीड़ा उठाया। 14 अक्टूबर, 1956 को उन्होंने नागपुर में हुई एक ऐतिहासिक सभा में अपने लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध–धर्म स्वीकार कर लिया। 6 सितम्बर, 1956 को दिल्ली में उनका देहान्त हो गया। सामाजिक न्याय व सम्मानपूर्ण जीवन के लिए शताब्दियों से पीड़ित, शोषित और दलित वर्गों के संघर्ष का प्रेरणा–स्त्रोत और महान योद्धा नहीं रहा। लेकिन उनके अविस्मरणीय योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

भारतीय समाज के सुधार पर बल :

डॉ. अबेडकर, महात्मा बुद्ध, संत कबीर, महात्मा ज्योतिबा फूले, रबिदास, पेरियार आदि महापुरूषों की शिक्षाओं और लेखन से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारे और मानव गरिमा की स्थापना के लिए हिन्दू धर्म की युगों पुरानी प्रथाओं के खिलाफ सुधार आंदोलन आयोजित किए। उन्होंने भारत के दलित वर्गों के हितों की रक्षा करने के लिए 'मूकनायक' नामक मराठी साप्ताहिक अखबार प्रकाशित किया तथा अछूतों की सामाजिक और राजनीतिक सुरक्षा के लिए सन् 1924 में 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की। उन्होंने ऊँची जातियों द्वारा शोषित लोगों के लिए एक अन्य मराठी अखबार 'बहिष्कृत भारत' शुरू किया। इस अखबार ने असामाजिक कृत्यों के खिलाफ आवाज उठाई और भारत में पहली बार सक्रियतावाद की शुरूआत की। इसके अलावा, तालाब से पानी पीने के अछूतों के अधिकार के लिए आयोजित महाड़ सत्याग्रह से लेकर मंदिर के भीतर प्रवेश करने के अछूतों के अधिकार के लिए हुए 'कालाराम मंदिर सत्याग्रह' तक डॉ. अंबेडकर ने दकियानूसी प्रयासों के खिलाफ लोगों को संगठित किया तथा उनके अधिकारों की रक्षा के लिए अत्यन्त संघर्ष किया। सन् 1932 में उन्होंने गांधीजी के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किए, जिस पर रामसे मैकडॉनल्ड कम्यूनल अवार्ड द्वारा दलित वर्गों को अलग निर्वाचन मंडल प्रदान किए गए थे।

राष्ट्रवाद और राष्ट्रीय अखंडता पर बल :

उपनिवेशवाद के खिलाफ राजनीतिक लामबंदी में राष्ट्रवाद संभवतः सबसे प्रभावशाली राजनीतिक साधन है। मानवजाति के इतिहास में राष्ट्रवाद एक महत्वपूर्ण शक्ति है। डॉ. अंबेडकर के विचारों में 'राष्ट्रवाद आत्मनिर्णय का सिद्धांत है जो बाहरी दबाव के बिना; तथा अपनी राजनीतिक स्थिति के बिना, चाहे वह स्वतंत्रता हो, परस्पर निर्भरता हो या दुनिया के अन्य लोगों के साथ संघटन हो, निर्णय लेने के साझा आदर्शों और साझा उद्देश्यों द्वारा एकजुट लोगों की इच्छा व्यक्त करता है।[1] डॉ. अंबेडकर की राय में राष्ट्रवाद का अर्थ है, मानवों के सामाजिक भाइचारे को साकार करने में अपना परिपूर्ण सामंजस्य प्राप्त करना, फिर चाहे उनकी जाति, रंग या पंथ कुछ भी हो। भारत में आजादी हासिल करने के लिए हुआ राष्ट्रवादी आंदोलन ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ एक लंबी लड़ाई थी। जब 1924 में अंबेडकर इसमें शामिल हुए तब यह आंदोलन अपने पूरे जोरों पर था। उनके अनुसार, ब्रिटिश उपनिवेशवाद से राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अधूरी रहेगी जब तक कि दलित वर्गों की पीड़ाओं और कष्टों का अंत नहीं कर दिया जाता। उन्होंने कहा कि व्यक्तियों को देश की स्वतंत्रता और देश में लोगों की स्वतंत्रता के बीच फर्क को पहचानना चाहिए। इस प्रकार, उनका मुख्य जोर लोगों की स्वतंत्रता पर था। स्वतंत्रता के बिना, राष्ट्रवाद गरीब और दास वर्गों के लिए आंतरिक गुलामी, बेगारी तथा

संगठित अत्याचार का माध्यम बन जाता है। उन्हें अहसास था कि उन्हें सबसे पहले ब्रिटिश उपनिवेशवाद से लड़ना होगा और उसके बाद ऊँची जाति के हिंदुओं से। इस तरह, उन्होंने राष्ट्र एकता और अखंडता के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक और आर्थिक स्वतंत्रता पर भी जोर दिया।

डॉ. अंबेडकर दिल से राष्ट्रवादी और देशभक्त थे। उन्होंने अंग्रेजों की आर्थिक नीति की कटु आलोचना की। 20 नवंबर, 1930 को पहले गोलमेज सम्मेलन में, उन्होंने भारत की स्वतंत्रता और कल्याण के पक्ष में भाषण दिया। सम्मेलन के पूर्ण सत्र में बोलते हुए उन्होंने ब्रिटिश सरकार से भारत छोड़ने के लिए तथा भारतीय लोगों को अकेला छोड़ देने के लिए कहा ताकि वे आजादी से अच्छी सरकार बना सके। उनका कहना था कि, 'हमारे पास एक ऐसी सरकार होनी चाहिए जिसमें सत्ता में बैठे लोग देश के सर्वोत्तम हित में अपनी अविभाजित्य राजनिष्ठा प्रदान करेंगे। हमारे पास एक ऐसी सरकार होनी चाहिए जिसमें सत्ता में बैठे लोग, इस बात को जानते हुए कि कहां विनयशीलता का अंत होगा और कहां से विरोध शुरू होगा, वे जीवन के सामाजिक और आर्थिक संहिता का संशोधन करने से भयभीत नहीं होंगे जो न्याय और औचित्य का निर्धारण करती है। ब्रिटिश सरकार यह भूमिका कभी भी नहीं निभा पाएगी। इसे केवल वही सरकार संभव बनायेगी जो लोगों की हो, लोगों के लिए हो और लोगों के द्वारा हो।[2]

भारत की आधारभूत एकता में डॉ. अंबेडकर का विश्वास 17 दिसंबर, 1946 को संविधान सभा में उनके पहले भाषण में झलक रहा था। जहां उन्होंने सुस्पष्ट रूप से कहा, ' हमारे धर्म, हमारी संस्कृति या हमारी भाषा से चाहे जो भी निष्ठा उत्पन्न होती हो, मैं चाहता हूं कि सभी लोग दिल से भारतीय हो।[3] संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में संविधान सभा के समक्ष दिया गया उनका भाषण एकीकृत समाज और राष्ट्र अखंडता के उद्देश्य का अद्वितीय समर्थन है। उन्होंने एक समान कानूनों तथा एकल और एकीकृत न्यापालिका, केन्द्रीय प्रशासनिक सेवा, धर्म निरपेक्षता के मूल्यों पर आधारित संविधान के जरिये भारतीय परिसंघ के निर्माण पर जोर दिया।[4] उन्होंने संघवाद के जरिये मजबूत एकजुट भारत की वकालत की।

भारतीय संविधान के निर्माता के रूप में मुख्य भूमिका :

डॉ. अंबेडकर एकमात्र ऐसे नेता थे जो जनवरी 1919 से लेकर 1945 तक औपनिवेशिक भारत में विधि–निर्माण की प्रक्रिया में शामिल थे। स्वराज संविधान बनाने के लिए कांग्रेस पार्टी ने अपनी विभिन्न रिपोर्टों में कई प्रस्ताव पारित किए। ये रिपोर्टें थी– '' मोतीलाल नेहरू रिपोर्ट'', ''सप्रू रिपोर्ट'' और ''भारत सरकार अधिनियम 1935''। अंततः यह फैसला लिया गया कि संविधान को अंतिम रूप देने हेतु संविधान सभा का गठन करने के लिए सभी राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों को चुना जाएगा। डॉ. अंबेडकर अपनी खुद की राजनीतिक पार्टी ''अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ'' के साथ इस चुनाव में लड़े लेकिन खुद को निर्वाचित करने में असफल रहे। बहरहाल, उनकी पार्टी के जोगेंद्र नाथ मंडल ही केवल ऐसे सदस्य थे जो प्रांतीय सभा तक पहुंचे। उन्हें बंगाल निर्वाचन क्षेत्र से चुना गया था। लेकिन संविधान सभा में जोगेंद्र नाथ मंडल ने डॉ अंबेडकर के लिए अपनी सीट छोड़ दी क्योंकि उन्हें लगा कि उस पद के लिए डॉ अंबेडकर ही उपयुक्त व्यक्ति होंगे। उन्होंने मुस्लिम लीग के साथ गठबंधन किया और उसके सदस्यों से कहा कि वे संविधान सभा के लिए बंगाल से डॉ अंबेडकर को निर्वाचित करें। बदकिस्मती से, 1947 में बंगाल के विभाजन ने संविधान सभा में अंबेडकर की सदस्यता को निष्क्रिय कर दिया। किन्तु जब कांग्रेस पार्टी को लगा कि उनके बिना काम नहीं चलेगा तब वह

एम. आर. जयकर के इस्तीफे के बाद बंबई से उनकी उम्मीदवारी का अधिकारिक रूप से प्रबंध करने के लिए आगे आई। यही वह कांग्रेस पार्टी थी जिसने कुछ महीनों पहले संविधान सभा में उनके प्रवेश का विरोध किया था। बहरहाल, उन्हें संविधान सभा में फिर से निर्वाचित किया गया। उसके बाद, प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने अगस्त 1947 में अंबेडकर को अपने मंत्रिमंडल में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। इस प्रकार वह स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री बने। 29 अगस्त को, भारत की संविधान सभा ने सर्वसम्मति से उन्हें प्रारूप समिति के अध्यक्ष के तौर पर चुना। इस समिति को संविधान को अंतिम रूप देने का कार्य सौंपा गया था। प्रारूप समिति में छह और सदस्य भी थे लेकिन उनमें से ज्यादातर किसी न किसी वजह से काम नहीं कर रहे थे, इसलिए संविधान सभा में जोरदार वाद–विवादों के बीच संविधान के मसौदे को तैयार करने और पथ–प्रदर्शन करने का पूरा भार डॉ. अंबेडकर के कंधों पर आ गया। डॉ. अंबेडकर ने भारत के संविधान के निर्माण में दोहरी भूमिका निभाई। एक ओर तो वह अछूतों के हिमायती थे और दूसरी ओर संविधान के विशेषज्ञ। वह एक सुप्रसिद्ध संविधानवादी और विशाल राजनीतिक अनुभव वाले व्यक्ति थे। यद्यपि डॉ. अंबेडकर अपने राजनीतिक और सांविधानिक दर्शन के अनुसार संविधान लिखने के लिए आजाद नहीं थे, फिर भी आजाद भारत के संविधान में ऐसे उपबंधों को शामिल करने के लिए उन्होंने अपनी हर संभव कोशिश की जो सबके लिए राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक न्याय के बुलंद सिद्धांतों पर आधारित नई ठोस व्यवस्था की स्थापना में मदद करें।

संविधान का मुख्य उद्देश्य था राजनीतिक लोकतंत्र को आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र के साथ जोड़ना। डॉ अंबेडकर इसे इस तरह बयान करते हैः ''संविधान का निर्माण करने में हमारा दोहरा उद्देश्य हैः पहला राजनीतिक लोकतंत्र के रूप को स्थापित करना, और दूसरा यह स्थापित करना कि हमारा आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है तथा साथ ही यह विहित करना कि प्रत्येक सरकार, जो भी सत्ता में हो, आर्थिक लोकतंत्र को संपादित करने का प्रयास करेगी। नीति निदेशक तत्वों का भी बहुत अधिक महत्व है; क्योंकि वे यह निर्धारित करते हैं कि हमारा आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है।''[5] परन्तु, सामाजिक–आर्थिक लोकतंत्र, जो समावेशी प्रकृति का था, को आजादी के तुरंत बाद भुला दिया गया। डॉ. अंबेडकर को इस समस्या का अहसास हुआ और उन्होंने एक गंभीर चेतावनी दी, '' 26 जनवरी, 1950 को हम विरोधाभासों से भरे जीवन में प्रवेश करने जा रहे हैं। राजनीति में हमारे पास समानता होती है तथा सामाजिक और आर्थिक जीवन में असमानता। राजनीतिक जीवन में हम एक व्यक्ति एक वोट तथा एक वोट एक मूल्य के सिद्धांत को मान्यता देंगे। लेकिन हमारे सामाजिक और आर्थिक जीवन, हम हमारी सामाजिक संरचना के कारण एक व्यक्ति एक मूल्य के सिद्धांत की उपेक्षा करना जारी रखेंगे। हमें इस विरोधाभास को जितना जल्द हो सके खत्म कर देना चाहिए, वरना जो लोग असमानता से पीड़ित हैं वे राजनीतिक लोकतंत्र की संरचना को तहस–नहस कर देंगे।''[6]

संसदीय लोकतंत्र पर बल :

संसदीय लोकतंत्र हमारे राष्ट्र की आधारशिला हैं। यह एक ऐसा राजनीतिक तंत्र है जहां कोई भी व्यक्ति आनुवांशिक शासक होने का दावा नहीं कर सकता। जो कोई भी शासन करना चाहता है उसे समय–समय पर लोगों द्वारा चुना जाना चाहिए और उसे लोगों की स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। अंबेडकर ने कहा कि, संसदीय प्रणाली की सरकार परिचर्चा द्वारा बनी सरकार से कहीं अधिक है। इसकी सफल क्रियाविधि इसके दो स्तंभों में निहित है।

1. मजबूत विपक्ष और 2.मुक्त और निष्पक्ष चुनाव।

कोई भी लोकतंत्र इसके बिना नहीं चल सकता। सरकार के कामकाज पर नजर रखने के लिए तथा उसे गलत राह से सही मार्ग पर वापस लाने के लिए एक मजबूत और क्रियाशील विपक्ष की आवश्यकता होती है। डॉ. अंबेडकर दृढ़ता से कहते हैं कि चुनाव मुक्त और निष्पक्ष होने चाहिए। बड़े व्यावसायिक घरानों को चुनावों की फंड़िंग से दूर रखा जाना चाहिए क्योंकि यह लोकतंत्र के लिए खतरा है। संसदीय लोकतंत्र से हमारा अभिप्राय है ' एक व्यक्ति एक वोट'। डॉ अंबेडकर के अनुसार राजनीतिक लोकतंत्र तब तक नहीं चल सकता जब तक कि उसके मूल में सामाजिक लोकतंत्र न हो। सामाजिक लोकतंत्र एक जीवनशैली है जो जीवन के तत्वों के रूप मे स्वतंत्रता, समानता और भाईचारें को मान्यता देती है।[7]

डॉ अंबेडकर ने मजबूती के साथ संसदीय सरकार का समर्थन और बचाव किया। उनका मानना था कि भारतीय गणराज्य के राष्ट्रपति को समानुपातिक प्रतिनिधित्व पर आधारित निर्वाचन द्वारा चुना जाना चाहिए ताकि राष्ट्रपति के चुनाव में अल्पसंख्यक भी कुछ योगदान दे सकें। राष्ट्रपति की आपातकालीन शक्तियों पर बोलते हुए, अंबेडकर ने संविधान सभा के वाद–विवादों के दौरान यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया कि राष्ट्रपति देश का प्रमुख है, लेकिन कार्यपालिका का प्रमुख नहीं। वह देश का प्रतिनिधित्व तो करता है लेकिन देश पर शासन नहीं करता। वह राष्ट्र का प्रतीक है।

दुर्बल वर्गों के लिए शिक्षा पर जोर :

डॉ. अंबेडकर ने भारतीय समाज की जाति संरचना पर एक अनवरत युद्ध छेड़ दिया था तथा वह ऊँची जाति के हमले और आलोचना का निशाना बन गए थे। उन्होंने कहा कि हिंदू समाज ने हजारों लोगों को अज्ञानता में रखा तथा उन्हें निरक्षर एवं अपने अधिकारों के बारे में अनभिज्ञ रखते हुए सदियों तक शूद्रों और अछूतों को शिक्षा से वंचित रखा है। ऊँची जाति के खिलाफ जंग के रूप में, तथा अपने साथी भाइयों को स्पष्ट रूप से अपने विचार बताने के लिए, उन्होंने 1920 में एक साप्ताहिक अखबार 'मूकनायक' शुरू किया। इसके बाद 20 जुलाई, 1924 को सामाजिक कार्यकर्ताओं की बैठक बुलाई और बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की जिसके लक्ष्य और उद्देश्य मुख्य रूप से इस प्रकार थे:[8]

क- छात्रावास खोलना तथा दलित वर्गों के बीच शिक्षा के प्रसार को बढ़ावा देना;

ख- पुस्तकालय, सामाजिक केन्द्र और कक्षाएं या अध्ययन मंडल खोलकर दलित वर्गों के बीच संस्कृति के प्रसार को बढ़ावा देना;

ग- औद्योगिक और कृषि स्कूल खोलकर दलित वर्गों के आर्थिक हालातों को बेहतर बनाना और आगे बढ़ाना;

घ- दलित वर्ग की शिकायतों का प्रतिनिधित्व करना;

ङ- दलित वर्गों के सामान्य ज्ञानोदय, सामाजिक उत्थान और आर्थिक बेहतरी के लिए किसी भी क्लब, संघ की मदद करना या कोई आंदोलन आयोजित करना।

डॉ. अंबेडकर ने वैयक्तिक प्रगति और सामाजिक परिवर्तन की प्राणशक्ति के रूप में शिक्षा के महत्व को समझा। डॉ. अंबेडकर के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य है लोगों को नैतिक शिक्षा देना और सामाजिक बनाना। उन्होंने प्रभावपूर्ण तरीके से कहा कि शिक्षा ऐसी चीज है जिसे हर किसी के लिए उपलब्ध कराया जाना ही चाहिए। उनका मानना था कि शिक्षा जीवन और स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए जन–आंदोलन का कारगर साधन

हो सकती है; यह अज्ञानता और गरीबी के कष्टों को मिटा सकती है; और उत्पीड़ित लोगों को अन्याय और शोषण के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रेरित कर सकती है। उन्होंने सन् 1946 में 'पीपुल्स एजुकेशन सोसायटी' की स्थापना की तथा कई स्कूल और कॉलेज शुरू किए जिन्होंने समाज के निचले तबके के लाखों छात्रों को उच्चतर शिक्षा हासिल करने में समर्थ बनाया।

आर्थिक विकास और श्रमिक कल्याण पर बल :

डॉ. अंबेडकर ने भारत के आधुनिकीकरण और औद्योगिकीकरण की नींव रखने में सबसे अधिक रचनात्मक भूमिका निभाई थी। उनके आर्थिक विचार मुख्य रूप से कृषि प्रणाली, औद्योगिक नीति के सुधार से संबंधित तो थे ही, साथ ही बीमा और निषेध के क्षेत्रों के साथ इस ढंग से संबंधित थे जो लोकतंत्र और राज्य–समाजवाद के अनुरूप थे। उन्हें 1942 में वाइसराय की कार्यकारी परिषद् में शामिल किया गया था। सरकार में, उन्होंने बढ़ी हुई कृषि उत्पादकता और आय प्राप्त करने के लिए औद्योगिक विकास की जरूरत पर बल दिया। उन्हें श्रम विभाग का जिम्मा सौंपा गया। इसके अंतर्गत श्रम कानून, कोयला खदानें, छपाई तथा लेखन विभाग और लोक निर्माण विभाग थे। कई श्रम संगठनों ने उनके मार्गदर्शन में काम किया और वे स्वतंत्र लेबर पार्टी से संबंद्ध थे जिसकी स्थापना अंबेडकर ने 1936 में की थी। उन्होंने इसी पार्टी के बैनर तले चुनाव लड़ा था। बाबा साहेब अंबेडकर ने कामकाजी वर्ग के फायदे के लिए कुछ कानून लागू किये थे–
भारतीय व्यापार संघ अधिनियम, औद्योगिक विवाद अधिनियम, मुआवजा अधिनियम आदि।

उन्होंने कहा कि भारत में श्रम के अंतिम उद्देश्य और लक्ष्य के रूप में सबसे पहला काम जो करना है वह है व्यापार संघों की महज स्थापना को अस्वीकार करना। इसे घोषित करना चाहिए कि इसका लक्ष्य है सरकार के परिवर्तन में श्रम को रखना। इसके लिए, इसे एक लेबर पार्टी को एक राजनीतिक पार्टी के रूप में संगठित करना चाहिए। अंबेडकर के विचार में, '' श्रम ऐसी सरकार चाहता है जो नाम से और यथार्थ में लोगों के द्वारा हो। श्रम स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा चाहता है जिसमें समान अवसर का अधिकार, हर प्रकार के कानून में, लोक सेवा में, सेना में, कराधान में, व्यापार में और उद्योग में विशेषाधिकारों का अंत शामिल है। असल में, इसमें असमानता की ओर ले जाने वाली सभी प्रक्रियाओं का अंत शामिल है।[9]

उन्होंने साधारणतः इस योजना के उद्देश्यों के निरूपण के प्रति तथा विशेष रूप से श्रम, सिंचाई, बांधों और विद्युत विकास के लिए नीतियों के निरूपण के प्रति जबरदस्त योगदान दिया।

न्यायसंगत समाज पर जोर :

डॉ. अंबेडकर ने, भारतीय संविधान का प्रमुख शिल्पकार होने के नाते, कई सांविधानिक प्रांतों के जरिए दलितों, पिछड़ों, मुस्लिमों और महिलाओं के लिए न्याय सुनिश्चित किया था। उन्हें एहसास हुआ कि भारतीय समाज वर्ग प्रणाली में जड़वत् है, और यह व्यक्ति को महत्व नहीं देता है। इस तरह, इस समाज में व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास का अवसर प्राप्त नहीं होता है। यही कारण था कि डॉ. अंबेडकर मौजूदा सामाजिक व्यवस्था में सम्पूर्ण परिवर्तन के पश्चात् उसे एक समतावादी समाज में बदलना चाहते थे। यही कारण था कि उन्होंने धर्म परिवर्तन कर बौद्ध धर्म को अपना लिया था। क्योंकि उनके अनुसार बौद्ध धर्म न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भाईचारें के सिद्धांत पर आधारित है। डॉ. अंबेडकर के लिए न्यायसंगत समाज का विचार न्याय स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के सिद्धांत पर आधारित है। जो मानवों के जीवन की न्यूनतम

आवश्यकताओं के लिए अनिवार्य है। डॉ. अंबेडकर का लक्ष्य था गरीब वर्गों का कल्याण, सामाजिक–आर्थिक लक्षणों पर आधारित असमानता का अंत करना। सभी के फायदे के लिए राजनीतिक अर्थव्यवस्था को पुनः संगठित करना, सम्पूर्ण रोजगार और शिक्षा को बरकरार रखना, कमजोर और निर्बल लोगों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना तथा अंततः कठोर सामाजिक बाधाओं के भीतर मनुष्य के विभाजन के बजाय सहयोग, प्रेम, मित्रता की नींव पर भारतीय समाज का पुननिर्माण करना।[10]

डॉ. अंबेडकर न केवल समाज सुधारक और तारक थे बल्कि वह भारत में सबसे बड़े शिक्षाविदों में से भी एक थे। वह इस बात को बहुत अच्छे से जानते थे कि यथोचित शिक्षा के बिना कोई भी राष्ट्र न तो विकास कर सकता है और न ही आधुनिक समय के प्रतिस्पर्धा भरे संसार में गुजारा कर सकता हैं। उन्होंने लोगों के बीच जागरूकता पैदा करने के लिए ''शिक्षित बनने, संगठित होने और संघर्ष करने'' का आह्वान किया। जब एक समाज आधुनिक शिक्षा को महत्व देगा तब वह अपने लोगों को एक अच्छा जीवन स्तर प्रदान करने में मदद कर सकता है। शिक्षा प्रत्येक लोकतांत्रिक समाज का आधार है, इसलिए राष्ट्र का निर्माण करने के लिए और एक दूसरे के साथ अच्छे संबंध बनाने के लिए नागरिकों को शिक्षा दी जानी चाहिए। यद्यपि, कई राजनीतिक विचारकों ने डॉ. अंबेडकर की तरह ही सोचा था लेकिन उन्हें अपने मिशन में थोड़ी ही सफलता मिली। किन्तु डॉ. अंबेडकर इसे राष्ट्रीय हित का विषय बना सके। उन्होंने इसे कानूनी अधिकार के खंड में शामिल किया ताकि देश के संविधान द्वारा इसकी सुरक्षा की जा सके। यह उन्हीं का ईमानदार भरा प्रयास था कि आज शिक्षा का अधिकार भारत के संविधान में एक मौलिक अधिकार बन गया है।

निष्कर्ष :

संक्षेप में कहा जा सकता है कि डॉ. अंबेडकर आधुनिक भारत के असली निर्माता थे। वह न केवल भारतीय संघ के रूप में आधुनिक भारतीय राष्ट्र के निर्माण में सहायक थे बल्कि वह संविधान के मुख्य शिल्पकार भी थे। यदि किसी ने सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से इस देश को व्यवस्थित करने का अथक प्रयास किया है तो वह निःसंदेह रूप से डॉ. अंबेडकर ही है, जिन्होंने न केवल दलित वर्गों के हितों की लगातार हिमायत की और उन्हें देश की राजनीति और अर्थव्यवस्था में उनका उचित अधिकार दिलवाया बल्कि उन्होंने लोगों को सुरक्षा की भावना, पहचान और साथ ही साथ गरिमा भी दी। उन्होंने अपने देश और लोगों से प्रेम किया तथा उन्होंने ईमानदारी से और समर्पित होकर उनकी मुक्ति, प्रगति और बेहतरी के लिए कार्य किया। उन्हें न केवल एक महान महान समाज सुधारक, एक देशभक्त या सामाजिक न्याय और स्वंतत्रता के एक जोरदार समर्थक के रूप में याद किया जाना चाहिए बल्कि उससे भी कहीं अधिक, एक महान संविधान निर्माता के रूप में याद किया जाना चाहिए। आज दुनिया उन्हें लोकतंत्र, वैयक्तिक अधिकारों और उपेक्षित लोगों की आवाज के निःशस्त्र योद्धा के रूप में याद करती हैं।

संदर्भ :

1. धनंजय कीर, डॉ. अम्बेडकर, लाइफ एण्ड मिशन, पॉपुलर प्रकाशन, बम्बई, 1962 पृष्ठ 14

2.उपर्युक्त, पृष्ठ 17–18

3. नवयुग, 13 अक्टूबर, 1947

4. बी. आर. अम्बेडकर, व्हॉट दी हिन्दूज हैव डन टू अस, पृष्ठ 8–9

5. उपर्युक्त, पृष्ठ 23

6. बी. आर अम्बेउकर, एनहीलेशन ऑफ कास्ट, पृष्ठ 23

7. उपर्युक्त पृष्ठ 47

8. अम्बेडकर, हू वर दी शूद्राज, पृष्ठ 145

9. उपर्युक्त, पृष्ठ 176

10. अम्बेडकर, स्टेट एण्ड माइनॉरिटीज, पृष्ठ 38